भीष्म साहनी की स्त्री चेतना और 'बसंती'

सारांश

स्त्री और पुरूष समाज के अभिन्न अंग हैं। इनके समन्वित रूप से समाज निर्मित होता है। यही नहीं किसी समाज का सर्वांगीण विकास भी तभी सम्भव होता है जब ये दोनों सम्मिलित रूप से अपनी भागीदारी निभाते हैं। हमारे समाज में स्त्रियों की दशा बहुत अच्छी नहीं रही है एवं यह विषमता प्राचीन काल से देखी जा रही है। समाज में स्त्री की स्थिति उसकी स्वतंत्रता, पुरूष के साथ उसका सम्बन्ध, विभिन्न सामाजिक रिश्ते उसके जीवन की दिशा निर्धारित करते हैं। हमारे साहित्यकारों ने स्त्री से सम्बन्धित इस विषय को विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से समाज के सम्मुख प्रकट करने का प्रयास किया है। भीष्म साहनी का 'बसंती' उपन्यास अकेली बसंती की कथा नहीं है, यह उस जैसी असंख्य कम उम्र की गरीब लड़कियों की कहानी है जो अपनी रूचि से जीना चाहती हैं। 'बसंती' के आसपास मंजुल भगत का 'अनारो' उपन्यास आया जिसमें घरों में काम करनेवाली औरतों का चित्रण किया गया है।'अनारो' और 'बसंती' में पर्याप्त भिन्नता है। जहाँ अनारो का संघर्ष प्रतिदिन की परेशानियों के साथ है वहीं बसंती का संघर्ष एक स्त्री का संघर्ष है जो आरम्भ से उपेक्षा और अभाव में पोषित हुई है। बसंती कठिन से कठिन परिस्थिति को हँसी में उड़ाकर जीने के लिए प्रतिबद्ध है।

मुख्य शब्द : बसंती, पोषित, संघर्ष, झुग्गी–झोपड़ी

मंजुला शर्मा
सहा. प्राध्यापक
टी0 डी0 बी0 कॉलेज
रानीगंज पश्चिम बंगाल

प्रस्तावना

'बसंती' भीष्म साहनी का चौथा उपन्यास 1980 ई0 में रचित है और इस उपन्यास के केन्द्र में झुग्गी–झोपड़ी में रहनेवाली 14 वर्षीय लड़की बसंती है। वह कठिनाइयों के साथ निरन्तर 'बड़ी' होती जाती है। सूरज पालीवाल के अनुसार '' बसंती का संघर्ष एक स्त्री का संघर्ष है, ऐसी स्त्री का जिसने बचपन से ही उपेक्षा और अभाव देखे हैं। उसकी बड़ी बहन को आठ सौ रूपये में बेचा जा चुका है और उसका सौदा भी बुलाकी दर्जी से बारह सौ रूपये में कर दिया है। लंगड़े बुलाकी की उम्र उसके पिता से भी अधिक है।''[1]

राजस्थान के गाँव से काम की तलाश में आये मजदूरों की बस्ती ही बसंती का बसेरा है। ''बसंती के झुग्गी–झोपड़ी के बासिन्दे कई प्रान्तों, जातियों और धर्मों के लोग हैं, राजमिस्त्री, कारीगर, धोबी,मोची, नाई, मजदूर आदि। इन्हें यहाँ रहते पीढ़ियाँ गुजर गयीं।''[2]बसंती अपने नाई बापू द्वारा 60 वर्षीय लंगड़े दर्जी बुलाकी के हाथों बिक चुकी है। ''बारह सौ होंगे। कहेगा तो आज ही उसके हाथ पीले कर दूँगा। चार सौ पेशगी अभी दे दे, पूरे एक हजार हो जाएँगे, दो सौ, लुगाई घर आ जाने पर दे देना।''[3]सूरज पालीवाल के शब्दों में ''एक पिता अपनी ही बेटी का सौदा जानवर की तरह कर रहा है, उसे मोल–भाव करने में किसी प्रकार संकोच नहीं हो रहा है बल्कि वह चालाकी से अधिक पैसे लेना चाह रहा है।''[4]रूपये लेने के बाद ब्याह के लिए बापू बसंती को जगाता है, ''हरामजादी अभी सो रही है। उठ जा.....और चौधरी ने उसे चुटिया से पकड़कर खाट पर सीधा बैठा दिया।''[5]

महानगरीय जमीन पर बने गैर कानूनी बस्ती टूटने की अफरा–तफरी में बसंती बच निकलती है और भागकर श्यामा बीबी के पास शरण लेती है। भाग्य से डरने वाली श्यामा बीबी दाम्पत्य–जीवन के कष्टों से मुक्ति पाने के लिए गुरू महाराज के आदेशानुसार ''किसी एक मनुष्य की सेवा कर। तेरा कष्ट दूर हो जायेगा।''[6] बसंती का हाथ थामती है और बसंती को एक सहारा मिल गया था जबकि श्यामा पुण्य कमा रही थी।''[7]शादी के घर में काम के दौरान बसंती दीनू की ओर आकर्षित होकर कुछ दिनों में उसके साथ भाग निकलती है ''अपने को अभिनेत्री मानकर व्यवहार करनेवाली बसंती का साहस सच्चा था, और उसका जोखिम भी सच्चा था जिसके पीछे अनेक खतरे मँडरा रहे थे।''[8] बसंती को गर्व होता है कि उसके साथ बूढ़ा नहीं छैल–छबीला युवक है और उसने वह कर दिखाया है जो उसकी बहनें नहीं कर पायीं। ''बूढ़ा तो नहीं है,

उसने मन ही मन गर्व से कहा और उसके बदन में फिर हिलोर सी उठी।''[9] बसंती दीनू को अपना पति मानती है वह उससे ब्याह करती है भीष्म साहनी लिखते हैं ''यह अभिनय भी था खिलवाड़ भी था, विवाह भी था, विवाह का स्वाँग भी था और भावी दाम्पत्य जीवन के लिए नारी हृदय की सहमी–सहमी सी भावविह्वल प्रार्थना भी थी।''[10] किन्तु दीनू का उद्येश्य बसंती को भोगना रहता है और दीनू को विवाहित जानने पर बसंती की मनः स्थिति कुछ इस प्रकार की होती है''हरामी ने बताया ही नहीं कि उसके घर में बीवी है और अनायास ही दो गरम–गरम आँसू बसंती के गालों पर लुढ़क गये। बीवी है तो क्या? मै इसके पीछे मारी–मारी तो नहीं फिरूँगी।''[11]

यहाँ बसंती का स्त्री मन यह सोचकर त्राण पाता है कि मैंने तो हृदय से इसे अपना पति माना है और लंगड़े दर्जी से वह बच निकली है दीनू की घरवाली को ग्रामीण जानकर बसंती को अपने शहरी हाने का पुलक भी होता है ''घर में तो मेरी ही चलेगी। दीनू भी मुझसे ही कहेगा, यह काम कर, वह काम कर, इधर जा, उधर जा। मैं साइकिल चलाना भी सीख लूँगी,दीनू की साइकिल तो है ही।''[12] हॉस्टल से निकाले जाने पर दीनू बसंती सहित बरडू के पास रहता है और बसंती को बरडू के हाथों 300 रूपये में बेचकर गाँव चला जाता है। बसंती एक बार फिर मर्द द्वारा मर्द के हाथों बिकती है। इस संदर्भ में श्याम कश्यप का विचार है ''जिस दीनू के साथ वह बूढ़े बुलाकी के हाथ बेचे जाने से बचने के लिए अपना घर–बार छोड़कर भागी थी, वही उसे बाद में तीन सौ रूपये में अपने दोस्त बरडू के पास बेचकर अपनी ब्याहता बीबी के पास गाँव भाग जाता है।''[13]''बसंती दीनू के गर्भ के साथ जगह–जगह ठोकरें खाती है और बरडू साये की तरह उसका पीछा करता है। अंततः असहाय गर्भवती बसंती का सौदा फिर से उसका बापू करता है। वह बुलाकी से बसी–बसायी गृहस्थी के लिए मोल–तोल कर रहा होता है कुछ इस प्रकार–

''पाँच सौ किस बात के? बारह सौ पर बात हुयी थी।
नौ सौ ले चुका है, बाकी तीन सौ मेरी तरह निकलते हैं।''
तीन सौ पिछले और दो सौ पेट के बच्चे के। तुम्हें बसी–बसाई गिरस्ती मिल रही है। इसके लिए क्या दो सौ ज्यादा है।''[14]

बसंती की इस स्थिति का विश्लेषण सूरज पालीवाल करते हैं–

''बसंती के लिए हर आदमी एक जैसा है, बुलाकी और बरडू के हाथ बिकी है लेकिन दीनू ने उसका उपभोग किया वैसे ही उसकी कमजोरी समझकर उसका जीजा उसे भोगना चाहता है। आदमी जात से बसंती का मोहभंग होता है, उसने अब तक आदमियों के बहुत किस्से सुने थे लेकिन एक आदमी के साथ बँधकर रहने से शायद इस प्रकार की परेशानियों से बचा जा सकता है, ऐसा वह सोचती थी। लेकिन जब वह आदमी ही उसे बेचकर चला जाए, तब? यह उसने नहीं सोचा था।''[15] बुलाकी के साथ रहते हुए बसंती दीनू का इन्तजार करती है और एक दिन अनायास ही राह चलते बसंती दीनू को पाकर उसके साथ हो लेती है तथा बुलाकी पीछे लाठी पटपटाता रह जाता है। अब बसंती का साक्षात् दीनू की ब्याहता रूक्मी से होता है जिसे वह अपनी तरह शहरी बनाना चाहती है। एक ही कोठरी में गृहस्थी का बँटवारा होता है ''अपने आप ही कोठरी में गृहस्थी का बँटवारा हो गया था। बड़ी खाट पर दीनू, अपनी पहली पत्नी के साथ सोता था, दूसरी दीवार के साथ लगी खाट पर बसंती अपने बच्चे को लेकर सोती थी।..... .....बेशक रूक्मी उसकी घरवाली बनती फिरे और उसके साथ सोए बेटा तो मेरा ही है। दीनू का बेटा तो मेरे से ही है, इससे बसंती को गर्व का भास होता था।''[16] दो औरतों का स्वामी दीनू उन्हें अपनी इच्छानुसार भोगता है। बसंती की कमाई से घर चलता है तथा नोक–झोंक के बीच बसंती जीने के लिए अभ्यस्त रहती है। ''बसंती, जिसे अपने हाथ की कमाई पर नाज है ओर जो खुद किसी पर कभी आश्रित नहीं रही, बल्कि घरों में चौका–बर्तन करके स्वयं दूसरों को पालनेवाली औरत है, सारे सामंती और पूँजीवादी मूल्यों और संस्कारों पर बेरहमी ओर साहस के साथ प्रहार करती है।''[17]

रूक्मी के बच्चे के जन्म के साथ बसंती की मनः स्थिति बिगड़ जाती है। हर पल उसके मन में अनिष्ट की कल्पना चलती है। उसे लगता है जैसे रूक्मी का दूध काला है और बच्चे के पेट में शूल उठा है और एक रात सचमुच बच्चे की तबियत खराब होते देख बसन्ती उसे लेकर डॉक्टर के पास पहुँचती है और सुबह दवाइयाँ लेकर आती है। इस घटना से बसंती का सारा द्वेष समाप्त हो जाता है।''बसंती की भीगी–भीगी ममता जो एक बार फूटी तो फिर थम नहीं पाई। उसी से उसका सारा द्वेष, सारी घृणा, सारी ईर्ष्या बह गई। उसके मन में फिर से स्थिरता आ गई।''[18] बसंती तंदूर चलाकर जीविका का प्रबंध करती है। ''इधर पास में जमीन का टुकड़ा खाली पड़ा है ना, वहीं पर हम अपना तंदूर लगाएँगे। रोटियाँ सेंककर भी देंगे और बेचेंगे भी और साथ में दाल–सब्जी भी बना दिया करेंगे। यहाँ पर पहले भी किसी का तंदूर लगा था।''[19] बसंती का तंदूर चल निकलता है और वह तंदूर पर खाना खाने आये बुलाकी के साथ ठिठोली भी करती है। ''इस पर घूँघट के पीछे से बसंती हँसकर फुसफुसाई थी, ''इनसे पूछो जी, कौन थी इनकी घरवाली?''

बुलाकी ने नाम बताया तो फिर घूँघट के पीछे से बसंती फुसफुसाई ''पूछो जी इनसे,वह क्यों भाग गई थी?''[20] इसी बीच सहसा दीनू और रूक्मी खुसर–फुसर कर सामान बाँधकर निकल पड़ते हैं और बसंती फिर अकेली हो जाती है श्री श्याम कश्यप के अनुसार''बसंती और पप्पू को छोड़कर दीनू और रूक्मी के अपने बच्चे को लेकर अन्तिम तौर पर चले जाने के साथ ही इस विडम्बना का भी जैसे अन्त हो जाता है और बसंती के पास देखने के लिए अब कोई 'सपना' नहीं बचता– उसे शायद अब इसकी जरूरत भी नहीं थी।''[21]

बसंती अपने स्वभावानुसार परिस्थिति के अनुरूप अपने आप को ढालने का प्रयास करती है। वह माँ, बहनें, पप्पू और तंदूर के साथ गुजर करने के साहस के साथ जीवन पथ पर आगे बढ़ती है। तभी महानगरीय सभ्यता में एक बार फिर बस्ती टूटने की अफरा–तफरी मचती है ''इतने ज्यादा पुलिस के आदमी सहसा पहुँच गये थे जितने बसंती ने केवल उस दिन देखे थे जब टीले पर बस्ती तोड़ी गई थी।''[22] जीवन के हर क्षेत्र में बसंती अपनी परम्परा और सामाजिक बंधन से विद्रोह करती है क्योंकि वह अपनी इच्छानुसार जीना चाहती है, इच्छित पुरूष के साथ जीना

चाहती है। सूरज पालीवाल के शब्दों में ''बसंती के माध्यम से भीष्म जी ने एक ऐसी स्त्री के जीवन की कथा लिखी है, जो स्त्री गरीब होते हुए भी अपनी तरह से जीना चाहती है जीवन जीने की स्वतंत्रता हर पग पर परीक्षा लेती है और खतरों से लड़ने की सीख देती है– बसन्ती उस परीक्षा और उन खतरों में खरी उतरती है, इसलिए उसका स्त्री–विमर्श अभिजात्य वर्ग के स्त्री–विमर्श से अलग और जमीनी है।''[23]

बसंती की इच्छायें, भावनायें, अपने को सम्पन्न बनाने की कोशिश उससे निरंतर संघर्ष करवाती है और वह निरंतर 'बड़ी' होती जाती है। कठिन से कठिन हालात को 'तो क्या बीवी जी' कहकर वह जैसे चुनौती देती है। इस सन्दर्भ में श्याम कश्यप द्वारा दिया गया विचार है ''मर्द और औरत के रिश्तों और परिवार तथा सामुदायिक जीवन के शोषण और तमाम दमनकारी शक्तियों को बसंती जैसी दृढ़ता के साथ चुनौती देती है, वह हिन्दुस्तान में एक सर्वथा नयी औरत की उभरती हुयी शक्ल है– सारे पतनशील सम्बन्धों और आर्थिक दासता के बन्धनों को तोड़ती हुयी बराबरी के दावेदार के रूप में। लेकिन इस चट्टानी दृढ़ता के नीचे बसन्ती एक निहायत कोमल और अपनी जड़ों तक मानवीय चरित्र भी है, जिसकी सभी खूबियों का भीष्म जी ने अपनी पूरी कलात्मक सामर्थ्य और सर्जनात्मक प्रतिभा के साथ सफल चित्रांकन किया है।''[24]

उपसंहार

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्ष चित्रित हुये हैं। 'झरोखे','कड़ियाँ ' और 'तमस' के बाद आया 'बसंती' निम्नवर्गीय 14 वर्षीय बालिका की कथा कहता है। इस नायिका प्रधान उपन्यास का केन्द्र बिन्दु चौका–बर्तन साफ करनेवाली लड़की बसंती है। बसंती अपने आप में मस्त रहनेवाली, अजाद ख्यालों वाली है। वह 60 वर्षीय लंगड़े दर्जी के साथ तय हुये विवाह का प्रतिकार चूहे मारनेवाली गोलियाँ खाकर करती है। वह अपनी परम्परा और सामाजिक बंधन से विद्रोह करती है जहाँ उसकी बहन पिता के हाथों बिक चुकी है बसंती अपने इच्छित पुरूष के साथ जीने की कामना लिये हर जोखिम उठाती है। बसंती बुलाकी से बचने के लिए जिस दीनू का हाथ थामती है वही उसे बरडू के हाथों 300 रूपये में बेचकर गाँव चला जाता है। असहाय गर्भवती बसंती दर–दर ठोकरें खाकर जब अपनी बहन के पास शरण प्राप्त करने जाती है तो वहाँ उसका जीजा उसे भोगना चाहता है। गर्भवती बसंती का सौदा उसके पिता द्वारा होता है। कुछ दिनों के अन्तराल में बसंती दीनू को देख उसके साथ हो लेती है। वह चौका बर्तन कर दीनू रूक्मी को पालती है तथा रूक्मी के बच्चा होते ही दोनों उसे छोड़कर चले जाते हैं। बसंती अब पप्पू और तंदूर के साथ जीने का संकल्प करती है तथा ऐसे में बस्ती एक बार फिर उजाड़ दी जाती है। बसंती अपनी इच्छा से जिन्दगी गुजारने की लालसा में हर क्षण संघर्ष करती है और कभी हार नहीं मानती। जबकि वह अपने बापू के लिए रूपया कमाने का साधन है, बुलाकीराम बुढ़ापे में 14 वर्षीय पत्नी की इच्छा करते हैं एवं दीनू उसे थकान मिटाने वाली और रोटी का इन्तजाम करने वाली वस्तु मानता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पालीवाल सूरज, सं0 नामवर सिंह, आलोचना त्रैमासिक, अंक 17.18. वर्ष 2004 पृ0 132
2. सक्सेना राजेश्वर/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 पृ0 119
3. साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1980 पृ0 16,
4. पालीवाल सूरज सं0 नामवर सिंह, आलोचना त्रैमासिक, अंक 17–18 वर्ष 2004 पृ0 132
5. साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1980 पृ0 18
6. साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980 पृ0 34
7. वही पृ0 35
8. वही पृ0 51
9. वही पृ0 56
10. वही पृ0 69
11. वही पृ0 88
12. वही पृ0 88
13. सक्सेना राजेश्वर/ ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति' और रचना', वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2005, पृ0 147
14. साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980 पृ0 118
15. पालीवाल सूरज, सं0 नामवर सिंह, आलोचना त्रैमासिक, अंक 17–18 वर्ष 2004 पृ0 136
16. साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980 पृ0 146
17. सक्सेना राजेश्वर/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना,' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 पृ0 150
18. पालीवाल सूरज, सं0 नामवर सिंह, आलोचना त्रैमासिक, अंक 17–18 वर्ष 2004 पृ0 136
19. .साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980 पृ0 146
20. सक्सेना राजेश्वर/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना,' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 पृ0 150
21. साहनी भीष्म 'बसंती' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1980 पृ0 179
22. पालीवाल सूरज, सं. नामवर सिंह, आलोचना त्रैमासिक, अंक 17–18 वर्ष 2004 पृ0 136,
23. सक्सेना राजेश्वर/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 पृ0 150
24. सक्सेना राजेश्वर/ठाकुर प्रताप 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 पृ0 150